Conclussion

उपसंहार

उपसंहार

आधुनिक युग चतुर्दिक विखण्डन, विघटन और नैतिक मूल्यों के ह्रास का साक्षी है। इस युग की पीड़ा साहित्यकार को कचोटती है और वह अपनी रचनाओं में उसकी अभिव्यक्ति करने का प्रयास करता है। छठे दशक की हिन्दी-गुजराती कहानियाँ इस सामाजिक परिवर्तन को बड़ी मार्मिकता से चित्रित करती हैं।

अपने शोध प्रबंध के समग्रालोचन के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि साठोत्तरी कहानियों में पारिवारिक सम्बन्धों के बदलाव को दर्शाया गया है। भ्रष्टाचार, यांत्रिकता और असन्तोष ने आस्थाओं, विश्वासों को तोड़ दिया है। आज देश की सम्पूर्ण मानसिकता में तनाव, आतंक और विश्वासहीनता बैठ गयी है। आज महानगरों की भीड़ में आदमी खो-सा गया है। भविष्य का कोई ठिकाना नहीं है। सामाजिक, आर्थिक दबावों के कारण नर-नारी के भाव-भीने मधुर सम्बन्ध तनाव से भरकर टूट रहे हैं। सामाजिक परिवर्तन की दिशा में सबसे बड़ा परिवर्तन संयुक्त परिवारों के टूटने और एकल परिवारों की निर्मिति में देखा जा सकता है।

मानव के सह अस्तित्व के लिए जीवन मूल्य बहुत जरुरी हैं। वास्तव में वे व्यवस्था की नींव हैं। मूल्यों का प्रारम्भ परिवार से होता है। परिवार में दो-तीन पीढियाँ एक साथ रहती हैं। सबका अपना-अपना व्यक्तित्व और स्वार्थ होता है। परिवार का स्वार्थ व्यक्तिगत स्वार्थ से महत्वपूर्ण हो जाता है। परिवार ही वह प्रथम

पाठशाला है, जहाँ मनुष्य जीवन मूल्यों का प्रशिक्षण लेता है। माता-पिता अपनी सन्तान के लिए त्याग करते हैं और सन्तानें माता-पिता के लिए। भाई अपनी बहन के लिए सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए तैयार रहता है और बहन भाई के लिए। सबके बीच एक भावनात्मक बंधन होता है, जो परिवार को जोड़ता है। जब यह बन्धन शिथिल हो जाता है तो परिवार बिखरने लगते हैं। परिवार में आज पारस्परिक प्रेम, उत्तरदायित्व की भावना, कर्तव्य, मर्यादा और अतिथि सत्कार जैसे शब्द खोखले नजर आते हैं, साथ ही परम्पराएँ बिखरती हुई दिखलाई देती हैं। आज हर रिश्ता बदला हुआ लगने लगा है। माँ-बेटे के बीच आ खड़ी होती है। पिता के रिश्ते को पुत्र बोझ समझने लगा है। कामकाजी बहन या बेटी को आज अर्थ प्राप्ति के कारण अविवाहित रहना पड़ता है। माँ अर्थ सिद्धि के लिए बेटी को शोषण करने में पीछे नहीं है। आज माता-पिता कमाऊ बेटे को अधिक मान-सम्मान देते हैं। आज कुछ पतियों की दशा ऐसी कि वे बेकार रहना पसन्द करते हैं। कारण वे जानते हैं उनकी पत्नी घर और बाहर दोनों को संभालने की क्षमता रखती है। कामकाजी नारी आज दयनीय अवस्था में जी रही है। आर्थिक कठिनाईयों के कारण स्त्रियों ने अपने पैरों पर खड़े होने का प्रयत्न किया है। नर-नारी के सोचने के ढंग बदल गये हैं। आज प्रेम के साथ सेक्स अनिवार्य है। ऐसी लड़कियों और नव-युवतियों की कमी नहीं है जो 'पवित्रता' के परम्परागत मूल्यों में आस्था रखती हों, कँवारी रहकर भी कोरी नहीं रहना चाहतीं। हँसना-बोलना, घूमना आदि प्यार है तो आज की नारी को उस पर कोई एतराज नहीं। आज प्रेम, स्नेह, करूणा, दया जैसी शास्वत मान्यताओं में कृत्रिमता, बनावट और दिखावा आ गया है।

साठ के बाद हमारे भारतीय संस्कारों से जुड़े पारिवारिक रिश्तों में तीव्र गति के साथ परिवर्तन हुआ है। पाश्चात्य संस्कृति ने हमारे जीवन को बहुत गहराई तक प्रभावित किया है। हमारी भारतीय परम्पराएँ धीरे-धीरे टूटती चली गई हैं। संयुक्त परिवार, ग्राम, स्वराज्य, अतिथि सेवा, भाईचारे की भावना आदि का कोई महत्व नहीं रहा। हर क्षेत्र में एक यांत्रिकता आ गई है। वेश-भूषा, खान-पान और रहन-सहन में सभी में हमने पाश्चात्य संस्कृति का अन्धानुकरण किया है। यह परिवर्तन अच्छा है या बुरा यह कहना कठिन है परन्तु यह सत्य है कि पाश्चात्य प्रभाव ने हमारे जीवन को हिलाकर रख दिया है। इस परिवर्तन से हानि के साथ कुछ लाभ भी हुआ है, किन्तु अब अस्पृश्यता, जातिभेद, दहेज प्रथा, बाल विवाह और वैधव्य जीवन से संबंधित सदियों पुरानी कहानियाँ भी अपने आप मिटने लगीं और उनका स्थान हमारे यहाँ परम्परागत परिवारों में विघटन कम नहीं हुआ। औद्योगिकीकरण ने जो नई आर्थिक दृष्टि दी है, उसने मानव को बुरी तरह अर्थ-केन्द्रित बना दिया। जीवन की गति तीव्र से तीव्रतर होती जा रही है। किसी को किसी का दुःख-सुख जानने की फुरसत नहीं। मनुष्य झपटकर कामियाबी की मंजिल पर चढ़ जाना चाहता है। सीढ़ियों से चढ़कर चलना उसे असह्य हो गया है। इस लिए वह लिफ्ट का इस्तेमाल करना चाहता है। इस स्पर्धा का सबसे अधिक शिकार परिवार हुए हैं। संयुक्त परिवार का तो महानगरों में अस्तित्व ही शेष नहीं रहा, एकाकी परिवार भी बिखर रहे हैं। अधिकतर पति-पत्नी किसी तरह 'एडजस्टमेंट' के सहारे परिवार को टूटने से बचाए हुए हैं। लोगों के बीच में गहरी दरारें पड गई हैं। सारे रिश्ते नाते झूठे पड गये हैं। दया, प्रेम, परोपकार आदि सद्वृत्तियाँ लुप्त होती जा रही हैं।

साठोत्तरी कहानीकारों ने बहुत तीव्रता के साथ पारिवारिक विघटन को अभिव्यक्त किया है। पारिवारिक विघटन की कहानियाँ पाठक को सबसे अधिक द्रवित करती हैं। बूढे माता-पिता की असहायता का चित्रण, परिवार के लालन-पोषण के लिए अविवाहित रहकर कष्ट उठाने वाली बहन के प्रति भाई-बहनों की उपेक्षा, दाम्पत्य सम्बन्धों में पति की व्यस्तता से पडने वाली दरारें पारिवारिक कहानियों के कुछ विशेष रूप से चर्चित पहलू हैं। कुछ कहानीकारों ने आर्थिक दबाव में जीते मध्यमवर्गीय आम आदमी का सुन्दर चित्रण किया है। मंहगाई और बेरोजगारी के नीचे दबे हुए आम आदमी की पीड़ा को ये कहानियाँ सहजता से प्रस्तुत करती हैं। कहानियों में नारी के पतन की कारणिक अभिव्यक्ति भी हुई है। स्थिति यह है कि आज बहन राखी बाँधकर खुश नहीं होती, न प्रेमिका प्रेमी को पाकर सन्तुष्ट होती है। माता-पिता बेटा या बेटी के साथ जीवन के सुख-दुःख बाँटकर जीने के अधिकारी नहीं रहे हैं। आर्थिक स्वातंत्र्यने नारी को अपने होने का गहरा बोध दिया, इस अहसास ने प्रेम और विवाह सम्बन्धों में परिवर्तन उत्पन्न किया है। नारी के लिए अब पति देवता नहीं और पति के लिए अब नारी बहुत समय तक नौकरानी नहीं बनी रह सकती है। नारी का स्वतन्त्र व्यक्तित्व ही परिवार में तनाव उत्पन्न कर विघटन का कारण रहा है। प्रत्येक व्यक्ति अपान जीवन अपने तरीके से जीना चाहता है।

सेक्स सम्बन्धी दृष्टिकोण में आज बहुत परिवर्तन आ गया है। आज की नारी मनचाहे व्यक्ति से कभी भी सेक्स सम्बन्ध स्थापित करके अपने सतीत्व को भंग हुआ नहीं पाती। क्षणिक आनन्द के लिए सेक्स की स्वतन्त्रता बढ रही है। साठोत्तरी

कहानियों में सबसे बड़ी विशेषता यही है कि वह पारिवारिक जीवन में उपस्थित सूक्ष्म सम्बन्धों में आये परिवर्तन को प्रमाणिक रूप से प्रस्तुत कर रही हैं। साहित्यकार ने इस संक्रमण के दौर में जिन स्थितियों को स्वयं देखा और भोगा है उसका यथार्थ चित्रण उसने अपने साहित्य में किया है।

साठ के बाद के कहानीकार ने जीवन का हर कोना छान मारा है। जीवन की कोई पीड़ा उनकी नजरों से नहीं छूटी। उन्होंने अपनी कहानियों मे शाश्वत मूल्यों के विघटन और परम्परागत मूल्यों के संक्रमण को अपने रूपों में चित्रित किया है। यह कहना भी अनावश्यक न होगा कि सभी कहानीकार अपने कथ्य के प्रति ईमानदार नहीं हैं। कुछ कहानीकारों की दृष्टि पूर्वाग्रहों के कारण दूषित भी हैं किन्तु ऐसे कहानीकारों की भूमिका कम महत्वपूर्ण नहीं है जो मूल्य संकट से संघर्ष कर रहे हैं। साहित्यकार का काम जीवन की स्थितियों का निर्लिप्त भाव से चित्रण कर देना है। समस्या का कृत्रिम समाधान करना आवश्यक नहीं है। समस्याओं को जान लेना ही काफी है। आज का कहानीकार इस लक्ष्य में पूर्णतया सफल रहा है।

साठोत्तरी कहानी की सर्जक पीढीने मोहभंग की पीडा को तो सहा ही है, साथ-साथ मानसिक और भौतिक यातनाओं को भी भोगा है। वह अपने आसपास से, अपने घिनौने नाटकीय जीवन से कड़वे यथार्थ से छुटकारा पाना चाहती हैं - चाहे वे पारिवारिक सम्बन्ध हों या सेक्स या विवाहित जीवन की जटिलताएँ हैं। आज का लेखक कोई बँधी-बँधाई धारणाओं को लेकर नहीं चलता। उसके पास न अपना कोई निर्णय है और न किसी प्रकार कें निर्णय तक पहुँचने की उत्कंठा। जब जीवन

में ही बिखराव आ गया है तो साहित्य में क्यों न होगा।

जीवन की विसंगति, विघटन और बिखराव के बीच वह खुद दिग्भ्रमित हो गया है। वह सर्जक है, सुधारक नहीं। इसीलिए अपनी रचना में अपनी ओर से कुछ भी जोड पाने में वह स्वयं को सक्षम नहीं पाता क्योंकि वह अपने विचारों को दूसरों पर लाद नहीं सकता। वह पात्रों को अपने अनुरूप गढ़ता नहीं है, उन्हें जीवन से उठा लेता है। पात्र लेखक की लकीर पर नहीं अपनी स्थितियों के अनुरूप गतिशील होते हैं। आज की कहानी को समझने के लिए बहुत जरूरी हो गया है - आज के व्यक्ति को समझना, जीवन के प्रति उसके दृष्टिकोण को पहचानना। आज भ्रष्टाचार सर्व व्यापक हो गया है, जीवन को कोई ऐसा क्षेत्र नहीं जिस पर उसकी छाया नहीं पड़ी हो। इन स्थितियों ने बुद्धिजीवी वर्ग को एक अदृश्य निराशा से भर दिया है। इस निराशा की छाया हिन्दी कहानी पर पड़ना स्वाभाविक है। साहित्यकार आगे बढ़ता रहा है। रास्ता ऊबड़-खाबड़ हो तो सफर कष्ट साध्य हो जाता है। पर साहित्यकार रुकता नहीं।

जीवन के इस बदलते परिदृश्य से संबंधित विभिन्न कहानियों को किन्हीं खानों में बाँटकर रख पाना संभव नहीं, फिर भी यदि इसे किया जाय तो यह बड़ा ही श्रमसाध्य कार्य है। इसे यथासंभव निभा ले जाने का प्रयास किया गया है। साठोत्तरी कहानी साहित्य में लेखकीय तटस्थता और सर्जनात्मक ईमानदारी के साथ प्रस्तुत किये गये विषयों में प्रमुख हैं - परम्परागत स्वरूप में परिवर्तन, व्यक्ति की मानसिकता, सामाजिक मान्यताओं के उल्लंघन से पारिवारिक विघटन, आर्थिक तनाव के से

उद्‌भूत महँगाई के कारण पारिवारिक विघटन, व्यावसायिकता से खड़े हुए प्रश्न, बेरोजगारी आदि। यही अध्ययनार्थ चुनी गई कहानियों के आधार हैं।

परिवार एक सार्वभौम, भावात्मक लघु संगठन है, जिसका अस्तित्व इतिहास के प्रत्येक चरण में किसी न किसी रूप में रहा है। व्यक्ति जीवन का आद्यांत नियमन एवं निर्धारण करने के कारण परिवार एक महत्वपूर्ण और प्राथमिक संस्था भी है। जन्मते ही बालक परिवार का एक महत्वपूर्ण सदस्य स्वयमेव ही हो जाता है। उसका पालन-पोषण, शिक्षा-दिक्षा, संस्कारों का निर्माण परिवार द्वारा ही किया जाता है। प्रत्येक परिवार की एक विशिष्ट संस्कृति होती है जो व्यक्ति की अस्मिता को बनाये रखती है। व्यक्ति जीवन के उत्तमोत्तम गुण - प्रेम, त्याग, सहानुभूति, दया, ममता आदि परिवार में ही विकसित होते हैं। परिवार को भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों ने भी परिभाषित किया है। उनमें से कुछ विचारों को यहाँ प्रस्तुत किया गया है। पाश्चात्य देशों में परिवार कामवासना की पूर्ति का साधन माना जाता है, परन्तु भारतीय परिवार धर्म, अर्थ, मोक्ष की प्राप्ति परिवार का प्रमुख उद्देश्य है। भारतीय परिवार की नींव 'भोग' पर नहीं 'त्याग' पर ही रखी गई है।

'परिवार' सम्बन्धी उपर्युक्त समस्त विवेचन का निष्कर्ष यह है कि परिवार एक ही वंश से सम्बन्धित संतान सहित या संतान रहित, पति-पत्नी से निर्मित एक संस्था है, जिससे पारस्परिक हितों की रक्षा की जाती है। उत्तरदायित्वों का, आर्थिक सामर्थ्य और सदस्यों की शक्ति के अनुसार विभाजन किया जाता है। परिवार के लिए

विवाह संस्था अनिवार्य है। प्रत्येक परिवार की अपनी अर्जित परम्परा होती है। परिवार मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन को प्रभावित करता है। परिवार के विविध संदर्भ, परिवार के कार्य, परम्परागत परिवार की विशेषताएँ, परिवार के विघटनकारी घटक, आर्थिक एवं नैतिकता, पारिवारिक बदलाव, सामाजिक संरचना, परिवार के परिवर्तित प्रकार्य, वैयक्तिक एवं सामाजिक तनाव आदि व्यक्ति की परिस्थिति एवं भूमिका तथा नवीन पदों को ग्रहण करने के कारण सामाजिक संरचना बदलती है। पति एवं पत्नी किसी एक की भूमिका में असंतुलन होने से परिवार में विघटन आरम्भ हो जाता है। व्यक्ति की निर्भरता परिवार पर कम हो जाती है, जिससे पारिवारिक विघटन बढा है।

साठोत्तरी कहानियों में हिन्दी में कमलेश्वर, उषा प्रियंवदा, मोहन राकेश, रांगेय राघव, ज्ञानरंजन, मन्नू भंडारी, दूधनाथसिंह, राजेन्द्र यादव, चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, दीप्ति खंडेलवाल, राजी सेठ, ममता कालिया, मंजुल भगत, मणिका मोहिनी, महीपसिंह, मेहरुन्निसा परवेज़, मालती जोशी, सुधा अरोड़ा आदि एवं गुजराती कहानीकारों में रघुवीर चौधरी, गुलाबदास ब्रोकर, मधु राय, जयंति दलाल, चुनीलाल मडिया, इश्वर पेटलीकर, कुन्दनिका कापड़िया, शिवकुमार जोशी, गणेश गणात्रा, पराजित पटेल आदि ने परिवार से जुड़ी, परिवार में उठने वाली समस्या के बारे में अधिक से अधिक कहानियाँ लिखीं हैं। कुछ कहानीकारों ने आर्थिक दबाव, सामाजिक मान्यताओं, आम-आदमी की पीड़ा को चित्रित किया है। महँगाई और बेरोजगारी के नीचे दबे हुए आम आदमी की परेशानियों को सहजता से प्रस्तुत किया है।

अर्थ केन्द्रित समाज में जन-जीवन के उतार-चढ़ाव का कारण अर्थ ही होता है। किसी भी व्यक्ति की सामाजिक प्रतिष्ठा का निर्णय आज उसकी आर्थिक स्थिति से निश्चित किया जाता है। सामाजिक जीवन में अर्थ को जितना महत्व इस युग मे प्राप्त हुआ है उतना पहले कभी नहीं। अन्य समाजों की भाँति भारतीय परिवार का उद्देश्य भौतिक न होकर आध्यात्मिक है। परिवार में होने वाले प्रत्येक कार्य को धर्मानुकूल किया जाता है, जिससे लौकिक एवं पारलौकिक जीवन का अभ्युदय हो सके। आज के युग में अन्तर्जातीय विवाह को अपनाया जा रहा है। कई सामाजिक मान्यताओं में तो आमूल परिवर्तन आया है। दहेज जैसी सामाजिक कुरीतियों से मुक्ति पाने और भावात्मक एकता का निर्माण हुआ है। आज सामूहिक संबंधों के स्थान पर वैयक्तिक संबंध ही महत्व रखते हैं। मनोरंजन पाने के लिए आज व्यक्ति क्लबों, होटलों या सिनेमाघर में जाते हैं। परम्परागत भारतीय परिवार के स्वरूप में बहुत परिवर्तन हुआ है। इक्कीसवीं शताब्दी में संयुक्त परिवार प्रथा के विघटन का आरम्भ एवं एकाकी परिवार का उदय एक महत्वपूर्ण घटना है। आज परिवार पति-पत्नी और सन्तान तक ही सीमित हो गए हैं। इसके कारणों में औद्योगिकीकरण, नगरीकरण, स्वतंत्रता एवं समानता और स्त्री-शिक्षा के अतिरिक्त व्यक्तिवादी प्रवृत्ति का विकास मुख्य है। सीमित आय एवं आय की असमानता के कारण परिवार मे तनाव की स्थिति उत्पन्न होने लगी और व्यक्ति-व्यक्ति के बीच का तनाव बढ़ता गया और परिवार विघटित होते गये। आज का व्यक्ति परम्परा से टूटा हुआ है। लेकिन आधुनिकता से भी वह पूरी तरह जुड नहीं पाया है। स्वतन्त्रता प्राप्ति ने मानवीय-मूल्यों को जिस तरह बदला है उसका प्रभाव पारिवारिक सम्बन्धों पर भी पड़ा है। स्वातन्त्र्योत्तर

कथा-साहित्य का भी इस प्रबाव से बच पाना बहुत मुश्किल था। साहित्यकारों ने 1960 के बाद के दौर में जिन स्थितियों को स्वयं देखा और भोगा है उसका यथार्थ चित्रण उन्होंने अपने साहित्य में किया।

साठोत्तरी कहानी का शिल्प पारिवारिक सम्बन्धों में बदलाव से प्रभावित अवश्य हुआ है। कहानी के परम्परागत शिल्पगत उपकरण - कथानक, पात्र एवं चरित्र-चित्रण, संवाद, वातावरण, भाषा-शैली आदि का प्रयोग सम्बन्धों में बदलाव के किसी विशेष धरातल के अनुरूप ही हुआ है। आज का कहानीकार परम्परावादी शिल्प को त्याग कर रचना की आधुनिक बुनावट द्वारा पारिवारिक सम्बन्धों के बदलाव को अभिव्यक्त करता है।

आज की कहानी में विवरणात्मकता के स्थान पर विभिन्न संकेतों के द्वारा अपनी बात को कहने का प्रयास किया जाता है, जिसमे कहानी का कथ्य अधिक विस्तृत आयामों को लेकर प्रस्तुत होता है। ये संकेत पृथक्-पृथक् अर्थ-किरणों को विकीर्ण करते हैं। इसी प्रकार बिम्ब-विधान और अनुरुप प्रतीक-योजनाओं के समावेश से कहानीकार अपने कथ्य को सम्प्रेषित करने में अधिक सफल होता है। आज का कहानीकार यद्यपि अपनी कहानियों में समस्याओं का कोई कृत्रिम समाधान प्रस्तुत नहीं करता किन्तु कहानीकार जिस प्रकार तीव्र गति से सरसंधान करता है उससे शिल्प में भी निश्चित रूप से परिवर्तन दिखलायी देता है।

आज कहानी की भाषा - संस्कृतनिष्ठ, उर्दूमिश्रित या बोलचाल की भाषा - के विशिष्ट घेरे में न बँधकर कहानी का आवश्यकतानुसार नित्य नवीन रूप धारण करती रहती है। एक ही कहानी में भाषा की कई-कई भंगिमाएँ देखी जा सकती हैं। इसी प्रकार मानसिक अन्तर्द्वन्द्वों, अंतःसंघर्षों को व्यक्त करने के लिए आत्मकथात्मक, स्वगत भाषण, डायरी और स्वप्न-शैलियों का प्रयोग कहानीकार करते हैं। अधिकांशतः जीवन की गृहीत का भाषा का ही उपयोग किया जाता है, कृत्रिमता का लवलेश मात्र वहाँ नहीं है। कहानीकार मुहावरों, कहावतों और यहाँ तक कि अंग्रेजी आदि अन्य भाषाओं का प्रयोग करके अनेक भाषा-छबियाँ प्रस्तुत करते हैं।

पारिवारिक विघटन आज के जीवन की ज्वलंत समस्याओं में से एक है - इसलिए छिटपुट रूप से इस विषय पर काफी लिखा भी गया है, कुछ विशिष्ट कथाकारों के साहित्य में भी पारिवारिक विघटन की विभिन्न स्थितियों का अनुशीलन किया गया है। प्रस्तुत शोध-प्रबंध में हिन्दी के विभिन्न कहानीकारों को ही आधार नहीं बनाया गया वरन् गुजराती कहानियों के साथ प्रस्तुत करके उन्हें तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास किया गया है। यह अनुसंधित्सु का सर्वथा मौलिक प्रयास है। वैश्वीकरण के इस युग में पूरा विश्व बहुत नजदीक आ गया है। विशेष रूप से भारत देश के अन्तर्गत अलग-अलग राज्यों की समस्याएँ बहुत अलग नहीं हैं। फिर भी गुजरात प्रदेश की स्थितियाँ विदेशों के अधिक प्रभाव के कारण कभी-कभी कुछ अलग रूप धारण करके प्रस्तुत होती हैं। इस अंतर की ओर भी ध्यान आकर्षित किया गया है। तथापि, शोधार्थी की सदैव अपनी सीमाएँ होती हैं, हिन्दीतर क्षेत्र में आधारभूत सामग्री और संदर्भग्रंथों का अपेक्षाकृत अभाव निरंतर हीनता का आभास

कराता रहा। उपलब्ध सामग्री के आधार पर ही निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कथ्य और शिल्प - दोनों ही दृष्टियों से साठोत्तरी हिन्दी-गुजराती कहानी समाज के एक आइने के रूप में भारतीय साहित्य की एक बड़ी उपलब्धि है।

****